अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा-चिन्तन की मासिक पत्रिका



वर्ष : 49 अंक : 8 श्रावण-भाद्रपद वि.सं. 2078 अगस्त, 2022 सहयोग राशि- अठारह रुपये पृष्ठ-28 RNI 43602/77 ISSN No.2581-981X



सुरसंगत में कला और व्यावसायिक सिनेमा पर गंभीर चर्चा

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति में प्रत्येक महीने के दूसरे रविवार को होने वाले 'सुरसंगत' अनौपचारिक समागम में इस बार साहित्य और कला जगत के अशोक आत्रेय, तथा पिछले एक दशक में राजस्थान की राजधानी को अंतर्राष्ट्रीय फ़िल्म समारोह जगत में बडा स्थान दिलाने वाले 'जयपुर इंटरनेशनल फ़िल्म फेस्टिवल (जिफ़)' के संस्थापक हनु रोज की उपस्थिति महत्वपूर्ण रही।

आत्रेय ने अपने प्रारम्भिक वक्तव्य में सत्यजित राय की 'पाथेर पांचाली' और विट्टोरियो डी सिका की 'बाइसिकल थीव्ज़' के साथ राजकपूर की 'आवारा' का जिक्र करते हुएसमागम में विद्वत चर्चा का दिलचस्प आगाज़ किया जिस पड़े दो घंटे से भी अधिक समय तक गंभीर संवाद हुआ।

इस अवसर पर लाख की चूड़ियां बनाने वाले सिद्धहस्त कारीगर, उम्दा थियेटर कलाकार तथा सुरसंगत के साथी अब्दुल अज़ीज़, जिनका पिछले निधन हो गया को श्रद्धांजलि देते हुए उनकी अनेक पुरस्कार प्राप्त लघु फ़िल्म 'ज़रीवाला आसमान' प्रदर्शित की गई।

साथ ही हिन्दुस्तानी सिनेमा में अपनी छोटी पारी में ही बड़ी छाप छोड़ने वाली नृत्यांगना अभिनेत्री शीला वाज़ के योगदान को भी रेखांकित किया गया जिनका निधन थोड़े दिनों पहले हो गया था। ❑

वाणी

यथोदकं दुर्गे वृष्टं पर्वतेषु विधावति।
एवं धर्मन्पृथक् पश्यंहस्तावेवानुविधावति।।

एकादशोपनिषद्, चतुर्थ वल्ली, श्लोक 14

पर्वतों की ऊंची चोटियों पर बरसा हुआ एक ही पानी जैसे अनेक धाराओं में बह निकलता है और लोग समझते हैं कि ये जल एक नहीं अनेक है, उसी प्रकार भिन्न-भिन्न धर्मों को देख कर मनुष्य समझने लगता है कि संसार में एकता नहीं, अनेकता है। ❑

समानो मन्त्र: समिति: समानी समानं मन: सहचित्तमेषाम्।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये व: समानेन वो हविषा जुहोमि।।
समानी व आकूति: समाना हृदयानि व:।
समानमस्तु वो मनो यथा व: सुसहासति।। ऋग्वेद

अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा–चिन्तन की पत्रिका

वर्ष : 49 अंक : 8 श्रावण–भाद्रपद वि.सं. 2078 अगस्त, 2022

क्र म



आवरण : शिवजी

राजस्थान के धोरों पर अपने उल्लास के पदचिन्ह छोड़ती रंग और गति भरी आज़ादी

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति
7–ए, झालाना डूंगरी संस्थान क्षेत्र,
जयपुर–302004
फोन : 2700559, 2706709, 2707677
ई–मेल : raeajaipur@gmail.com

संरक्षक :
श्रीमती आशा बोथरा
संपादक :
राजेन्द्र बोड़ा
कार्यकारी संपादक :
प्रेम गुप्ता
प्रबंध संपादक :
दिलीप शर्मा

अपनी बात

सवाल आजादी की शिक्षा का

❑

हर साल आजादी का उत्सव मनाया जाता है। इस स्वतंत्रता दिवस पर 75 वर्ष पूरे हो जाएंगे। आजादी की लड़ाई लड़ते समय हमने सपना देखा था कि आजादी के बाद कैसी शिक्षा व्यवस्था होगी! सपना ही नहीं देखा था बल्कि एक नई शिक्षा संकल्पना की नींव भी रखी थी। शिक्षा के साथ हुनर को भी जोड़ा था ताकि हर आदमी अपनी रोटी कमा सकें और स्वाभिमान के साथ जी सके । इस शिक्षा में स्वावलंबन पर जोर था। ऐसी शिक्षा जिसमें अहंकार का कोई स्थान न हो। हर व्यक्ति में विनयशीलता हो।

विचार करने की बात यह है कि शिक्षा लोक कल्याणमुखी समाज की संरचना में सफल क्यों नहीं हुई ? हम क्यों अराजकता, सांप्रदायिकता और हिंसा की ओर बढ़ते जा रहे है। जहां विचारों और कर्मो में हिंसा प्रवेश करती है वहां स्वतंत्रता का द्वार बंद हो जाता है। आज सवाल है आजादी की शिक्षा का।

भारतीय संविधान हमें अपनी जिम्मेदारी निभाने का रास्ता दिखाता है। हमारे सभी संदेहों को दूर करता है। हमारे सवालों के जवाब देता है। हमारा संविधान हर भारतीय के सपनों को एक मजबूत राष्ट्रीय ताने-बाने में बुनने का रास्ता दिखाता है। भारत के नागरिक होने के कारण हम सबकी सांझा जिम्मेदारी है कि हम देश को संविधान की भावना के अनुकूल बनायें।

आज हम जिस आजादी का सुख भोग रहे हैं वह एक सुचिंतित एवं सुसंकल्पित आंदोलन से आयी थी। एक नहीं अनेक लोगों की शहादत से आयी थी। उस शहादत में एक जुनून था। एक तपस्या थी। विचार और विवेक था। एक निर्देश था, राष्ट्र निर्माण का निर्देश। आजादी के दीवानों का लक्ष्य तो एक ही था। जिन मूल्यों के बूते पर हमने आजादी पाई उन्हीं मूल्यों की आधारशिला बनाकर हमें नए भारतीय समाज का निर्माण करना था।

इसी माह 12 अगस्त को अंतरराष्ट्रीय युवा दिवस मनाया जाता है। पूरे विश्व की बड़ी आबादी है युवा। इस युवा शक्ति बड़ा महत्व है। युवा शक्ति का सहारा लेकर शिक्षा पर्यावरण, गरीबी, बाल अपराध जैसी गंभीर समस्याओं का निदान किया जा सकता है। जयप्रकाश नारायण ने तो यहां तक कहा था 'मेरे नवयुवक मित्रों! तुम्हारा मार्ग प्रशस्त हो! संपूर्ण क्रांति का मेरा सपना जमीन पर उतारना युवा शक्ति के हाथ में है। मैं तो यह सब देखने के लिए नहीं रहूंगा पर, समाज का अंतिम व्यक्ति जब इज्जत के साथ जीवन जी सकेगा, अपनी क्षमता भर मेहनत कर सकेगा और अपनी आवश्यकता भर पा सकेगा, तब मुझे संतोष होगा।'



आजादी के उत्सव को मनाते हुए आज हमें लोकतंत्र की जड़ों को मजबूत करने वाली शिक्षा की संकल्पना को पूरा करना है।❑ **प्रेम गुप्ता**

शिक्षा में सामाजिक हस्तक्षेप

❑



❑
आदित्य नटराज

इंडिया डेवलपमेंट रिव्यू (आईडीआर) के डिजीटल प्लेटफार्म पर एक पॉडकास्ट में आदित्य नटराज तथा सेंटर फार सिविल सोसायटी के संस्थापक अध्यक्ष पार्थ शाह के साथ हाल ही में 'सार्वजनिक बनाम निजी' स्कूलों पर लम्बी चर्चा हुई थी। उसी चर्चा में से नटराज द्वारा कही गई बातों का संपादित अंश हम यहां आइडीआर से साभार प्रस्तुत कर रहे हैं। ❑ सं.

स्कूली शिक्षा बच्चे के लिए केवल उपयोगितावादी लक्ष्य नहीं है। मैं स्कूली शिक्षा लोकतंत्र-निर्माण की एक बड़ी परियोजना के रूप में देखता हूं। हम बहुत युवा लोकतंत्र हैं। ठीक 76 साल पहले हम 550 रियासतें थे। हमारे पास भारत की अवधारणा नहीं थी। मेरे दादा-दादी को इसका कोई गुमान नहीं था, और मेरे परदादा-दादी ने भी इसके बारे में नहीं सुना था। हमारे पास लोकतंत्र की अवधारणा नहीं है। उस अवधारणा के निर्माण के लिए सार्वजनिक शिक्षा एक प्रमुख उपकरण है।

मुझे नहीं पता कि आपको याद है कि नहीं जब आप स्कूल में थे, लेकिन मुझे याद है कि मेरी डायरी में 'अनेकता में एकता' और ये सभी चीजें थीं, जो अब भी बार-बार मजबूत होती हैं, क्योंकि मुझे विश्वास और जुड़ाव की जरूरत होती है। मैं तमिलनाडु से हूं। मुझे त्रिपुरा के एक व्यक्ति से संबद्ध होने की आवश्यकता है, मुझे जम्मू और कश्मीर के व्यक्ति से संबद्ध होने की आवश्यकता है, और मुझे जैसलमेर के व्यक्ति से संबद्ध होने की आवश्यकता है, जिसका भोजन, संस्कृति मेरे से काफी अलग है। सार्वजनिक शिक्षा ऐसा लोकतंत्र बनाने की प्रक्रिया में मदद करती है। वह बताती है कि वे कौन से समान मूल्य हैं जिनके साथ हम जीते हैं? हम साथ क्यों आए हैं?

दूसरा दृष्टिकोण सामाजिक न्याय का दृष्टिकोण है। हमारा एक ऐसा देश हैं जिसमें जातियों की बहुत अधिक विविधता है। यहां न केवल दलित और बहुजन हैं, बल्कि विशेष रूप से कमजोर आदिवासी समूह भी रहते हैं। इन सबके साथ हमारे समाज में एक तरह की रैंकिंग (श्रेणियां) भी बनी हुई हैं। हमारा संविधान सामाजिक न्याय की भी बात करता है। मुझे संविधान सभा में बाबा साहब अंबेडकर का वह बयान बहुत पसंद है, जब उन्होंने कहा कि कल हम एक नई दुनिया में कदम रखने जा रहे हैं, जहां राजनीतिक रूप से हम लोकतांत्रिक होंगे। सभी का एक वोट होगा। लेकिन सामाजिक रूप से हम अब भी अलग होंगे। चूंकि एक महिला पुरुष की तरह शक्तिशाली नहीं है, निचली जाति ऊंची जाति जितनी शक्तिशाली नहीं है, अल्पसंख्यक बहुसंख्यक के रूप में शक्तिशाली नहीं होंगे। और यही वह समानता है जिसकी हमारे संविधान की प्रस्तावना चाहती है। इसलिए सामाजिक न्याय के लिए भी यह सुनिश्चित करना अत्यंत महत्वपूर्ण है

कि सार्वजनिक शिक्षा सभी के लिए सुलभ हो। हमें वास्तव में लोकतंत्र का निर्माण करने की जरूरत है, हमें सामाजिक न्याय का निर्माण करने की जरूरत है, हमें भारत के विचार का निर्माण करने की जरूरत है। इसमें सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली बहुत महत्वपूर्ण है। समानता हमारा अंतिम लक्ष्य है। सवाल यह है कि हम उस सामाजिक समानता तक कैसे पहुंचें?

मैं मानता हूं कि कम बजट वाले निजी स्कूल, जो अभी-अभी दुकानों के रूप में स्थापित किए गए हैं, ठीक हैं। लेकिन जैसे ही आप इससे एक स्तर ऊपर जाते हैं, वास्तविकता यह है कि निजी स्कूल में विशेष आवश्यकता वाले या सीखने की अक्षमता वाले बच्चे को प्रवेश नहीं देने की संभावना अधिक होती है।

मैं दिल्ली के एक सरकारी स्कूल में गया, जो बहुत अच्छा प्रदर्शन करने वाला सरकारी स्कूल था। मैं स्कूल के प्रिंसिपल से मिला मैंने उनसे पूछा, आप इतना अच्छा प्रदर्शन कैसे कर रहे हैं? उनका स्कूल निजी स्कूलों से बेहतर प्रदर्शन कर रहा था। यह लगभग 12-15 साल पहले की बात है।उन्होंने कहा हम वही करते हैं जो प्राइवेट स्कूल वाले करते हैं। तो मैंने पूछा आप क्या करते हैं?''उन्होंने कहा, आठवीं कक्षा में, हम 10-15 प्रतिशत बच्चों को निकाल देते हैं। कक्षा नौ में, हम अन्य 10-15 प्रतिशत बच्चों को निकाल देते हैं और उनके माता-पिता से कहते हैं कि वे उन्हें किसी अन्य स्कूल में डाल दें। फिर 10वीं कक्षा तक, हमारे पास 70

हमें वास्तव में लोकतंत्र का निर्माण करने की जरूरत है, हमें सामाजिक न्याय का निर्माण करने की जरूरत है, हमें भारत के विचार का निर्माण करने की जरूरत है। इसमें सार्वजनिक शिक्षा प्रणाली बहुत महत्वपूर्ण है। समानता हमारा अंतिम लक्ष्य है। सवाल यह है कि हम उस सामाजिक समानता तक कैसे पहुंचें?

प्रतिशत पास के बजाय 100 प्रतिशत पास होने वालें बच्चे होते है। अगर निजी स्कूलों को ऐसा करने की इजाजत है तो मैं ऐसा क्यों नहीं कर सकता?

अगर खेल के नियम हैं कि सरकारी स्कूल को सबसे कमजोर को लेना है, सबसे गरीब को लेना है, पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी को लेना है, और दूसरी तरफ आप चुन सकते हैं और आप सर्वश्रेष्ठ ले सकते हैं, तो आप आईआईटी बनाम समावेश-आधारित इंजीनियरिंग कॉलेज की प्रतिस्पर्धा करा रहे हैं। ये दो अलग-अलग मॉडल हैं। इसलिए मुझे लगता है कि सरकारी स्कूल वास्तव में समावेशन में अच्छे हैं। क्योंकि जनादेश के रूप में हमारे पास कोई विकल्प नहीं है। यदि आप विशेष आवश्यकता वाले हैं, तो हमें आपको शामिल करना होगा। यदि आप अनाथ हैं, तो हमें आपको शामिल करना होगा। यदि आप शुल्क का भुगतान नहीं कर सकते हैं, तब भी हमें आपको शामिल करना होगा। और मुझे लगता है कि यदि आप वास्तव में समावेश चाहते हैं तो हमारे पास यह अवसर है।

मैं कॉरपोरेट सेक्टर से आता हूं। मैं ऐसी व्यवस्था के लिए निजी प्रोत्साहनों के लिए तैयार हूं, लेकिन मैं यह नहीं देख पा रहा हूं कि ऐसा प्रोत्साहन किस तरीके से बनाया जाए कि उसमें समावेश भी शामिल हो। इसलिए मुझे लगता है कि सरकारी स्कूल वास्तव में अच्छे हैं।

मुझे लगता है कि निश्चित रूप से सरकार बनाम निजी में धारणा की दृष्टि की समस्या है। असर के आंकड़े दिखाते हैं कि, सामाजिक-आर्थिक भेद के समायोजन में निजी और सार्वजनिक वास्तव में समान स्तरों पर नतीजे देते हैं। दुर्भाग्य से, बाजार में यह धारणा नहीं है। वास्तविकता यह है कि यदि आप देश के एक वर्ग से हैं और एक निजी स्कूल में जा रहे हैं, और मैं दूसरे वर्ग से हूं और एक सार्वजनिक स्कूल में जा रहा हूं। फिर आप तुलना करते हैं। आप मुझसे कहते हैं कि आप बेहतर हैं। लेकिन वास्तविकता में ऐसा माता-पिता के कारण है जो आपको पढ़ा रहे हैं। इसलिए, मुझे लगता है कि यह एक धारणा का अंतर है।

दूसरी बात, देश के प्रत्येक जिले में करीब 2000 स्कूलें चलती हैं। मतलब पांच लाख बच्चे; आप इतने बच्चों को मध्यान्ह भोजन कराते होंगे।आप कितना ही संभाल रख लें इस

बात की संभावना होगी कि कोई दिन कभी भोजन संक्रमित हो जाए। लेकिन मीडिया इसे बढ़ा-चढ़ाकर पेश करेगा यह कहते हुए कि सरकार निकम्मी है। दूसरी तरफ निजी स्कूल स्थानीय मीडिया में यह कहते हुए विज्ञापन देते हैं कि हमारे बच्चे को 98 प्रतिशत, 97.6 प्रतिशत और 97.2 प्रतिशत अंक मिले। सरकार अपनी स्कूलों के ऐसे विज्ञापन मीडिया में नहीं देती। तो व्यवस्थित रूप से एक धारणा बन गई है कि सरकार काम नहीं करती है और निजी वाले काम करते हैं। दूसरी ओर देखें, आईआईटी काम करता है; आईआईटी पूरी तरह से सरकारी है। आईआईएम काम करता है; आईआईएम पूरी तरह से सरकारी है। देखिये, वास्तव में, यदि आप एक निजी संस्थान की स्थापना करते हैं, तो जब तक आप आईआईएम की प्रतिष्ठा या आईआईटी की प्रतिष्ठा को प्राप्त करते हैं आपको कई, कई साल लगने वाले हैं।

हम मानते हैं कि सरकारी स्कूल काम नहीं करते हैं। मैं आपको एक जीवंत उदाहरण देता हूं। एक शिक्षिका है जिसके साथ मैंने काम किया। वह एक स्कूल की प्रधानाध्यापक है। वह कक्षा एक से तीन तक एक बच्ची पर काम करती है, और वह बच्ची अच्छा प्रदर्शन करना शुरू कर देती है। जैसे ही वह अच्छा प्रदर्शन करना शुरू करती है, उसके माता-पिता कहते हैं, हममें नहीं लगता कि इस लड़की को यहां पढ़ना चाहिए। वह काफी स्मार्ट लगती है, चलो उसे प्राइवेट स्कूल में डाल देते हैं। वे अपनी लड़की को निजी स्कूल में ले जाते हैं। प्रिंसिपल रोती है। दो साल बाद, बच्ची निजी स्कूल में पर्याप्त प्रदर्शन नहीं कर रही है क्योंकि उसे इस अत्यधिक अनुशासित वातावरण की आदत नहीं है। उसे प्यार की जरूरत है, उसे देखभाल की जरूरत है, उसे खुशी की जरूरत है। जबकि वह एक ओवर-रेजिमेंटेड, आर्मी-टाइप'' स्कूल था। बच्ची ठीक प्रदर्शन नहीं कर पा रही थी। माता-पिता को उसे इस सरकारी स्कूल में वापस लाना पड़ा। मैं यह उदाहरण यह कहने के लिए दे रहा हूं कि अलग-अलग बच्चों को अलग-अलग तरह की चीजों की जरूरत होती है। मगर हमारी धरणा बन गई है कि निजी स्कूल सरकारी स्कूल से अच्छे हैं।

शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा आप बच्चे को स्व-नियमन में उसकी मदद करते हैं। आप न इसे रोक सकते हैं और न इसकी अनुमति दे सकते हैं। आपको लगातार निगोशियेट करना होगा। मुझे लगता है कि अगर स्कूल प्रणाली बहुत अधिक उपभोक्ता-केंद्रित हो जाती है, यह कहते हुए कि मैं माता-पिता की सुनूंगा और माता-पिता बच्चे की सुनेंगे, तो आप एक ऐसे समाज का निर्माण करेंगे, जो स्व नियंत्रित होने में सक्षम होने के विपरीत होगा।

वास्तविकता तो यह है कि, ग्रामीण क्षेत्रों में, ऐसे स्कूलों का एक समूह भी है, जो अत्यंत रेजीमेंटेड हैं, और उन्हें जिस अनुशासन की आवश्यकता होती है, वह बच्चों के विकास के लिए हानिकारक है। आप जितना अधिक होमवर्क देते हैं, आपको एक बेहतर स्कूल के रूप में माना जाता है। जितना अधिक आप मेरे बच्चे को डांटते हैं, आपको एक बेहतर स्कूल माना जाता है। दुर्भाग्य से ये धारणाएं हैं। मुझे सरकारों को शिक्षा में उपभोक्ता की जरूरतों को पूरा करने से रोकना है। शिक्षा केवल ग्राहक-केंद्रित व्यवसाय नहीं है। अगर आपके बच्चे ने कुछ मांगा है, तो आप उसे तुरंत नहीं दें। क्योंकि शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा आप बच्चे को स्व-नियमन में उसकी मदद करते हैं। आप न इसे रोक सकते हैं और न इसकी अनुमति दे सकते हैं। आपको लगातार निगोशियेट करना होगा। मुझे लगता है कि अगर स्कूल प्रणाली बहुत अधिक उपभोक्ता-केंद्रित हो जाती है, यह कहते हुए कि मैं माता-पिता की सुनूंगा और माता-पिता बच्चे की सुनेंगे, तो आप एक ऐसे समाज का निर्माण करेंगे, जो स्व नियंत्रित होने में सक्षम होने के विपरीत होगा। इसलिए, मुझे लगता है कि हमें माता-पिता की पसंद को सुनने में सावधान रहना चाहिए।

लेकिन साथ ही, मैं बहुत स्पष्ट कर दूं, अगर सभी स्कूल सरकारी स्कूल होते, तो मैं सबसे पहले खड़ा होकर विरोध करूंगा क्योंकि हमें नवाचार की

जरूरत है और हमें विकल्प की जरूरत है। यह संतुलन बना कर ही हो सकता है। मैं ऐसी कोई व्यवस्था नहीं खड़ा कर सकता, जहां केवल एक बड़ा भाई हो जो यह तय करने वाला हो कि क्या हो। मैं एकाधिकार के विरोध में हूं और नवाचार के तर्क से पूरी तरह सहमत हूं। कम से कम हमें यह स्वीकार करना होगा कि हमारे देश में सरकारी स्कूल उतने नवोन्मेषी नहीं हैं जितना उन्हें होना चाहिए। सरकारी स्कूलों की व्यवस्था में इनपुट का मानकीकरण होता है और हमें उम्मीद है कि हम निजी स्कूलों से कुछ अलग करना सीख सकते हैं। और साथ ही, मुझे लगता है कि निजी स्कूल भी सरकारी स्कूलों से सीख सकते हैं कि कैसे अधिक समावेशी होना चाहिए और 98.7 प्रतिशत अंक बनाम 98.6 प्रतिशत अंकों की प्रतिस्पर्धा में नहीं पड़ना चाहिए, और शिक्षा का वास्तव में क्या मतलब है उसे नहीं बिगाड़ना चाहिए। शिक्षा एक व्यापक अवधारणा है। कम आय वाले समुदायों को भी खेल तलाशने की जरूरत है। एक उच्च आय वाले समुदाय को कला या खेल का पता लगाने की जरूरत है।

मुझे लगता है कि एक सरलीकृत अकादमिक पैमाना बढ़ाया जा रहा है। शायद इसलिए कि आप खुद को और कैसे अलग करेंगे? आपको 98 प्रतिशत मिले, मुझे 97 प्रतिशत मिले। मुझे आपसे बेहतर स्कूल होना चाहिए; मुझे आपसे ज्यादा ग्राहक चाहिए। और यहीं से विकृति शुरू हो जाती है। यहीं से मुझे लगता है कि निजी स्कूल की सीमाएं और व्यवस्था के

हमारे देश में सरकारी स्कूल उतने नवोनमेषी नहीं हैं जितना उन्हें होना चाहिए। सरकारी स्कूलों की व्यवस्था में इनपुट का मानकीकरण होता है और हमें उम्मीद है कि हम निजी स्कूलों से कुछ अलग करना सीख सकते हैं।

नकारात्मक पहलु दिखने लगते हैं। मगर तब तक, मुझे यही लगता रहता है कि यह एक बहुत अच्छी व्यवस्था है।

महामारी ने इस शिक्षा के पूरे हालत ऐसे बिगाड़ दिये हैं जैसे कल होगा ही नहीं। अभी सरकारी स्कूलों में बच्चों के फिर से नामांकन बढ़ने का वर्तमान कारण उनका प्रदर्शन नहीं है। ऐसा इसलिए है क्योंकि माता-पिता ने नौकरी खो दी है और इसलिए बच्चों को निजी स्कूलों में भेजना वहन नहीं कर सकते। लगभग डेढ़ दो प्रतिशत का जो शिफ्ट अचानक जो हमें इस समय देखने को मिल रहा है, विशुद्ध रूप से आर्थिक कारणों से है। यह कई स्तरों पर परेशानी पैदा करने वाला है। यह शिक्षकों के लिए, माता-पिता के लिए और योजनाकारों के लिए परेशानी का सबब बनने वाला है।

राज्य स्तर पर बैठे एक शैक्षिक योजनाकार के रूप में मैं सोच रहा हूं कि क्या यह स्थाई होने जा रहा है या यह 2 प्रतिशत माता-पिता निजी स्कूलों में वापस जाने वाले हैं या नहीं। आप 2 प्रतिशत अधिक बच्चों को संभालने की अपनी क्षमता जल्दी से नहीं बढ़ा सकते। यह वास्तव में कठिन है। अगर मैं सरकार में हूं और मुझे 2 फीसदी और बच्चों की योजना बनानी है, तो मैं 1,00,000 और शिक्षकों की बात कर रहा हूं। क्या आपको लगता है कि वे रातों रात उपलब्ध होने जा रहे हैं? सवाल ही नहीं। ऐसा नहीं होने वाला है। इसलिए, मुझे योजनाकार के रूप में लगता है कि कुछ गड़बड़ हैं। और मान लीजिए कि मैं उस क्षमता का निर्माण कर भी लेता हूं और फिर कल बच्चे निजी स्कूलों में वापस चले जाते हैं क्योंकि मैं देने में सक्षम नहीं हूं या माता-पिता प्रदर्शन का प्रबंधन करने में सक्षम नहीं हैं तो मैं अचानक एक मृत निवेश के साथ फंस गया हूं। और फिर हर कोई आकर मुझ पर चिल्लाएगा कि मेरे शिक्षकों के पास पर्याप्त छात्र-शिक्षक अनुपात नहीं है। इसलिए, मुझे लगता है कि योजनाकार मुश्किल में हैं।

शिक्षक असमंजस में हैं, क्योंकि योजनाकार अतिरिक्त शिक्षकों की भर्ती नहीं कर रहे हैं। अतिरिक्त 2 प्रतिशत बच्चे स्कूलों में शामिल हो रहे हैं। और यह 2 प्रतिशत औसत है।जब आप अलग-अलग समुदायों में झांकते हैं, तो आपको पता चलता है कि वह प्रतिशत 25 जितना अधिक भी हो सकता है, या कोई अंतर भी नहीं हो सकता है।सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वे बच्चे शायद कक्षा चार तक अंग्रेजी माध्यम में थे। अचानक वे दो

साल तक किसी स्कूल में गए बिना कक्षा छह में मेरे पास आए, और मैं हिंदी माध्यम पढ़ा रहा हूं। तो मुझे इसका कैसे प्रबंधन करना चाहिए? आप अंग्रेजी में पाठ्यपुस्तक देखते थे, लेकिन अब मैं हिंदी में पाठ्यपुस्तक देने जा रहा हूं। आपके दोस्त भी अलग हैं। आपके अस्सी प्रतिशत दोस्त अभी भी प्राइवेट स्कूल में हैं, 20 प्रतिशत यहां आए हैं। वे सोच रहे हैं कि क्या यह अस्थायी है। घर में तनाव है। तो मुद्दा माता-पिता के पाले में आ रहा है।

दुर्भाग्य से भारत में स्कूली शिक्षा एक सामाजिक मूल्य की वस्तु है। अगर आपको आश्चर्य है कि इतने सारे लोग कॉलेज में पढ़ने को क्यों जाते हैं और काम नहीं करते हैं, खासकर महिलाएं। ऐसा इसलिए है क्योंकि दुर्भाग्य से बीए पास का सामाजिक मूल्य है। यह उपयोगितावादी आर्थिक मूल्य नहीं है; यह व्यक्ति के लिए भी मूल्य नहीं है। मेरी बेटी स्नातक है का समाज में मूल्य है। लेकिन आप उससे काम करने की उम्मीद नहीं करते हैं। मैं बेटी को स्नातक बनाना चाहता हूं और मैं यह भी नहीं चाहता कि वह काम करे। दुर्भाग्य से दोनों सच हैं। उसी तरह, निजी बनाम सार्वजनिक स्कूली शिक्षा का सामाजिक मूल्य है। इसलिए, अगर मैं एक मध्यम या उच्च वर्ग का व्यक्ति हूं और मेरा बच्चा सरकारी स्कूल में वापस चला गया है, तो शायद यह मेरी नौकरी चली जाने से ज्यादा अपमानजनक है। इसलिए, मुझे लगता है कि इन सब के परिणामस्वरूप समाज में मंथन है। मैं दो साल के सीखने के नुकसान के बारे में भी बात नहीं कर रहा हूं – चाहे वह निजी हो या सरकारी, सभी ने बहुत कुछ खोया है। पिछले दो वर्षों में, हमारे स्कूल केवल नौवीं, दसवीं, ग्यारहवीं, बारहवीं के लिए 100 दिनों से कम समय के लिए खुले हैं। कक्षा एक से पांच तक पूरे देश में व्यावहारिक रूप से बंद रहे हैं।

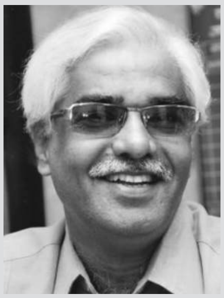
दरअसल, प्रदर्शन करने का तरीका है विकेंद्रीकरण करना और लोगों को जवाबदेह ठहराना है। मुझे लगता है कि भारत में उस बदलाव को पहचानने में हमें और पांच से सात साल लगेंगे। व्यवसाय में प्रतिभा को संभालने के तरीके को पहचानने में हमें 10–15 साल लग गए।

मैं एक शाश्वत आशावादी हूं, और शायद भ्रम में भी हूं। मैं नहीं मानता कि गिलास आधा भरा है; मेरा मानना है कि गिलास ज्यादातर समय 99 प्रतिशत भरा रहता है। मुझे लगता है कि जिस कुंजी पर हम जोर देना है वह है विकेंद्रीकरण। मुझे नहीं पता कि राज्यों को चीजें तय करने की जरूरत क्यों है। भारत में एक जिला 800 से 2,500 स्कूलों को संभालता है। यह बहुत बड़ी संख्या है। आपको अपने बारे में सोचने के लिए किसी और की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उस समूह के भीतर पर्याप्त मानक विचलन है। तो आप जिलों का विकेंद्रीकरण कैसे करेंगे ? यदि आप किसी जिले से और नीचे जाते हैं, तो ब्लॉक स्तर पर 100-250 स्कूल होते हैं। मैं चाहूंगा कि उस स्तर पर और अधिक शक्ति हो – ब्लॉक और जिला स्तर पर, और अंत में स्कूल और शिक्षक स्तर पर।मुझे लगता है कि शिक्षक, स्कूल, क्लस्टर, ब्लॉक, जिला और राज्य के बीच अधिकारों का वितरण शिक्षक के पक्ष में और अधिक संतुलित करने की आवश्यकता है। यह अगले 30 वर्षों की एक यात्रा होगी।

लेकिन जब आप प्रशासकों से बात करते हैं, तो मुख्य मुद्दा यह होता है कि हम प्रदर्शन नहीं कर पा रहे हैं। तो, धारणा यह है कि प्रदर्शन करने का तरीका अधिकार लेना है। दरअसल, प्रदर्शन करने का तरीका है विकेंद्रीकरण करना और लोगों को जवाबदेह ठहराना है। मुझे लगता है कि भारत में उस बदलाव को पहचानने में हमें और पांच से सात साल लगेंगे। व्यवसाय में प्रतिभा को संभालने के तरीके को पहचानने में हमें 10-15 साल लग गए। हम कल्पना करते थे कि नियंत्रित करने और चिल्लाने से आपको बेहतर मूल्य मिलता है। अब धीरे-धीरे निजी क्षेत्र में हमने महसूस किया है कि इससे काम नहीं होता। हम सोच रहे हैं कि लोग इस्तीफा क्यों दे रहे हैं। आपको उद्देश्य की भावना पैदा करनी होगी, आपको प्रतिनिधि बनाना होगा, आपको सशक्त बनाना होगा और फिर जवाबदेह ठहराना होगा। सरकारी व्यवस्थाओं को इन उपकरणों को सीखने की जरूरत है।❑

मुझे शिक्षक होने का गर्व है

❑



❑

डॉ. अशोक बोहरा 'अनित्य'

लेखक जोधपुर के जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय के सेवानिवृत्त प्रोफेसर हैं शिक्षा से सरोकार रखने वाली विभिन्न गैरसरकारी और स्वयंसेवी संस्थाओं से सक्रिय रूप से जुड़े रहे हैं। ❑ सं.

मुझे शिक्षक होने का गर्व है। मैं अपने भाग्य पर इतराता हूं क्योंकि ऊपरवाले ने मुझे शिक्षक बनने की राह पकड़ने को प्रेरित किया। मुझे ऐसे शिक्षकों का शिष्य बनाया जिनके जीवन को देख, समझ और सीख कर मैं अपना मार्ग चुन सका और उस पर चल सका।

मैं एक सन्तोष करने लायक शिक्षक का जीवन जी पाया हूं। इसके लिए मैं उपरवाले का अनुगृह प्रकट करता हूं। मैं चाहता हूं प्रत्येक शिक्षक अपने शिक्षक होने पर गर्व करे। अगर कोई अपने शिक्षक होने का गर्व न कर सके तो उसे शिक्षक पद का परित्याग कर कुछ और कर लेना चहिये।

मेरे शिक्षक श्री ज्योति स्वरुप माथुर साहब कहा करते थे कि हम चांद पर तो पहुंच सकते हैं; मगर अच्छा और आदर्श शिक्षक कौन है इसका पता लगाना इससे भी भारी पड़ता है। हमारी शिक्षा व्यवस्था का तंत्र तो यह पता लगाने में पूरी तरह अक्षम साबित हुआ है। यह बात उन्होंने पिछली सदी के सातवें दशक में विश्वविद्यालय में हो रही पद्दोन्नतियों को लेकर कही थी। उस व्यवस्था को लेकर मेरे आदरणीय शिक्षक आर. के. बिस्सा ने तब के डीन साहब से कहा था होगा तो वही जो आप चाहेंगे, मगर परिणाम वही आयेंगे जो मैं कहता हूं; इस संकाय से क्लास टीचिंग उठ जायेगी। और वही हुआ भी। किसी शिक्षक का राष्ट्रपति बन जाना कोई क्रांतिकारी घटना नहीं है; लेकिन जब कोई राष्ट्रपति अपना पद त्याग शिक्षक बन जायेगा उसे क्रांतिकारी घटना कहेंगे। शिक्षक ही सभी को बनाता है, अत: वही राष्ट्र की सबसे महत्वपूर्ण इकाई है। उसकी तुलना किसी से भी करना बेमानी होता है।

जब सरकारें शिक्षक को अन्य सरकारी कर्मचारियों जैसा या दोयम दर्जेका मानने लगे और उसे अपने तबादले तक के लिए सत्तारूढ़ पार्टी के निर्वाचित नेता का सिफारिशी पत्र साथ में लाने का कहे उस देश का भला उपरवाला भी नहीं कर सकेगा।

आजादी के बाद स्वतंत्र भारत में पिछले सात दशकों से अधिक समय में शिक्षा के साथ जो कुछ हुआ है वह सभी के सामने हैं जिसे याद दिलाने की आवश्यकता नहीं है। इसका कारण शासन में निहित स्वार्थों से प्रेरित निर्णय लेने वाली व्यवस्था रही है। आकस्मिक जरूरतों को पूरा करने के नाम पर पैबंद पर पैबंद लगते चले गए और एक समग्र सोच को लागू कर पाना संविधान की समवर्ती सूची के कारण कठिन ही रहा है। दीर्घ काल में फलित होने वाला शिक्षा का क्षेत्र पंचवर्षीय सरकारों की प्राथमिकताओं में नहीं रहा और शिक्षक भी अन्य कामगारों की भांति मुलाजिमों

की भीड़ में शुमार होता चला गया। यह भारतीय शिक्षा के साथ सबसे बड़ी दुर्घटना हुई है। शिक्षक उसे ही बनना चाहिए जो वास्तव में शिक्षक बनना चाहता है और जिसे शिक्षक की बड़ी जिम्मेवारी का भान हो। शिक्षण का काम किसी अन्य की तरह रोजगार नहीं है।

मैं अपने जीवन का एक किस्सा इस बात को समझने के लिए साझा करना चाहता हूं। विश्वविद्यालय परिसर में प्रवेश करते ही पहले पीरियड में मेरी क्लास थी, अत: मैं सीधा ही क्लास लेने चला गया। मेरा दूसरा पीरियड खाली था और मैं पहला पीरियड समाप्त कर फैकल्टी ऑफिस में चला गया। वहां मैंने अपनी आकस्मिक अवकाश का प्रार्थनापत्र लिख कर प्रस्तुत कर दिया। इस टिप्पणी के साथ कि हालांकि मैं अवकाश पर हूं फिर भी मेरा नाम मैं छुट्टी पर हूं यह बताते हुए बोर्ड पर न लिखा जाए क्योंकि मैं अपनी बाकी की कक्षाएं ले कर जाऊंगा। बड़े बाबू जिन्होंने मेरी एप्लीकेशन ली वे बड़े आश्चर्य चकित हुए और मुझसे जानना चाहा कि तुम पहला पीरियड ले कर आ रहे हो और दूसरा खाली है बाकी वाले लेना चाहते हो फिर ये आकस्मिक अवकाश किस लिए ? मैंने कहा मैं आज दस मिनट लेट हो गया था इसलिए; वे खिलखिलाकर हंस पड़े। तो मैंने कहा नहीं साहब मैं छह सौ मिनट लेट था और मेरे साथ छात्र इंतजार कर रहे थे। मुझे कोई अधिकार नहीं कि मैं इनका समय बर्बाद करूं। आज आकस्मिक अवकाश लगेगा तो मैं आगे से लेट होने से बच पाऊंगा। अनेक लोग इसे मेरी मूर्खता कह सकते हैं, मगर आप गहराई से सोचेंगे तो शायद समझ पाएंगे। बस यही फर्क हमें अपने शिक्षक होने और अन्य कर्मचारियों के बीच करना होगा।

शिक्षक उसे ही बनना चाहिए जो वास्तव में शिक्षक बनना चाहता है और जिसे शिक्षक की बड़ी जिम्मेवारी का भान हो। शिक्षण का काम किसी अन्य रोजगार की तरह रोजगार नहीं है।

जब मैंने सोचना शुरू किया कि विषय ज्ञान व उसे संप्रेषित करने की कला के अलावा, आदर्श शिक्षक के मापदण्ड क्या हो सकते हैं, तो मेरे जेहन में जे. के. व्यास साहब ही आये और उनके जीवन से वे सूत्र निकाले जो मोटे तौर पर शायद हमारी मदद कर सकेंगें। यह सूत्र हैं त्याग और सेवा, सहजता और शान्ति, संकल्प और संवेदन-शीलता, कर्तव्यपरायणता, कठोर परिश्रम, कर्म ही पूजा, सभी के स्वीकार भाव लिए, मैत्री भाव, मूल्यपरक जीवन, अध्यात्म प्रेरित व्यवहार, और बिना नीलकण्ठ बने अमृत का वितरण और स्वयं विष पान!

कोई कह सकता है कि विषय ज्ञान व उसे संप्रेषित करने की कला के अलावा अगर अच्छे शिक्षक के लिए इतने सारे गुणों की आवश्यकता है तो शिक्षक बनना कंटकाकीर्ण मार्ग पर चलना ही होगा और क्यों कोई उसे अपनाएगा? लेकिन शिक्षक बनने वाला प्रत्येक व्यक्ति यदि इन भावों को आत्मसात किए रहता है तो उनमें व्यास साहब जैसा शिक्षक बनने की चिंगारी बनी रहेगी। उतना ही काफी है।

अब सवाल उठता है कि ऐसे अभ्यार्थी कैसे खोजें जिनमें ऐसी चिंगारी सुलग रही है? बेरोजगारों की भीड़ में सभी हाथ काम चाहते हैं और वे कोई भी जॉब मिल जाए उसके लिए सभी अवसरों को आजमाते हैं। सभी जॉब के लिए अभ्यर्थियों की डिग्रियां देखी जाती है, निर्धारित परीक्षाओं में उन्हें ऊंचे नंबर लाने होते हैं। जॉब देने के लिए वे सारी चीजें देखी जाती हैं जो मापी जा सके। शिक्षक के लिए मापी जा सकने वाली योग्यताओं के अलावा जो सूत्र मैंने ऊपर बताये हैं उन्हें कैसे मापा जा सकता है? उसकी परीक्षा कैसे हो सकती है? शिक्षक को तैयार करने वाले डिग्री पाठ्यक्रम में भी इन सूत्रों का कोई स्थान नज़र नहीं आता। उच्च या विश्वविद्यालयीय शिक्षा के लिए तो बिल्कुल ही नहीं जहां शिक्षकों के चयन में भी राजनीति घर कर गई लगती है। वास्तव में आज की शिक्षा व्यवस्था को ढांचागत एवं उसके वित्तपोषण के आमूल चूल परिवर्तन की आवश्यकता है। यदि ऐसा किया जा सके तो अति उत्तम होगा। ❑

अमरगंगा, बृह्मबाग, जालोरी गेट बाहरे, जोधपुर-342001
मो.नं. 9828560943

मास्टर साहब ने ही कुछ सीखा

❑



❑
अशोक आत्रेय

प्रौढ़ शिक्षा की अलख के शुरुआती दौर से ही जुड़े बहुमुखी प्रतिभा के धनी भाई अशोक आत्रेय ने अनोखे अंदाज में अपने संस्मरण का साझा किया है।

इस गांव के सारे बूढे राम-राम करना जानते थे। लेकिन अधिकतर चलते-चलते देवडी की माताजी को धोक भी लगाते थे। उनमें से कोई भी 'भारत माता की जय' का अर्थ नहीं जानता था। यह आजादी के आधी सदी बाद का सच था। रात की प्रौढ शिक्षा की कक्षा में जब एक प्रौढ शिक्षा के मास्टर जी ने बूढे तोतों से राम-राम कहा तो सबने उत्साह से राम-राम कहा लेकिन जब 'भारतमाता की जय' का नारा लगाया तो सारे बूढे एक दूसरे की तरफ देखने लगे। उनके कुछ भी समझ में नहीं आया। माता और जय शब्द के अलावा। एक बूढे ने रात की शाला के मास्टर जी से पूछा - ये भारतमाता कौन है मास्टर साहब? किदर बिराजती है? इसका कोई मंदिर है?

मास्टरजी ने बडे उत्साह से जवाब दिया सारा भारत ही इसका मंदिर है । भारत! यह कौनसा गांव है? पई-बूझडा के उसी प्रौढ ने दूसरा सवाल पूछ लिया। बाबा, भारत कोई गांव नहीं, देश है गुरु बोला। देश क्या होता है मास्टर जी? बूढे की जिज्ञासा अभी तक शांत नहीं हुई थी।

प्रौढ शिक्षा की रात्रि शाला में कुछ माह पहले ही मास्टर जी ने इस सुदूर पर्वतीय अंचल में एक बडा कनस्तर किरासन, कुछ किताबें, प्राइमर, चार्ट , रजिस्टर नया लालटेन व एक भारत का नक्शा भी सरकार से मिली सप्लाई में पाया था। मास्टर जी ने बडी संदूक से निकाल कर भारत का नक्शा बोर्ड के पास दीवार पर कील ठोककर टांग दिया। फिर बहुत भावुक होकर बूढे को इशारा करके बताया - यह है हमारा भारत देश। हिमालय से कन्याकुमारी तक। अटक से कटक तक।

रात के दस बजे थे। आज रात्रिशाला वैसे भी देर से शुरू हुई थी। वह दिनभर कडी धूप मेंअपने छोटे से डूंगर की जमीन में मानसून की पहली बरसात में ही धान रोपकर जल्दी में रात्रिशाला में आ गया था। सरपंच साहब का आदेश था। बूढे बाबा ने फिर एकबार अपने चश्मे को धोती के पल्लू से साफ किया। आंखों पर चश्मा चढाकर सामने की दीवार पर गल डंडे लगे पीले कागज को बार-बार देखा। फिर हिम्मत करके कहा - मास्टर जी इतना छोटा है भारत? एक कागज जितना? इससे तो बडा है हमारा बूझडा और पई गांव!

मास्टर जी जानते थे। यह एक बडा सच था। उनके खुद के लिए प्रौढ शिक्षा का यह पहला सबक। भारत तो देश के किसी भी गांव से तब तक छोटा रहेगा जब तक हम कागजी शिक्षा का प्रचार करते रहेंगे। वह क्लास पंच परमेश्वर अशिक्षित बूढे तोतों के लिए नहीं थी उन शिक्षकों के नाम थी जिनके हाथ में हमने शिक्षा की अलख सौंप रखी थी।❑ **3, राधा निकुंज, गणेश नगर 'बी' इस्कान मंदिर मार्ग, जयपुर-302001 मो.नं. 9828402226**



किसने चाहा था

किसने चाहा था सूरज दिखाई न दे
किसने चाहा था जीवन सुनाई न दे
किसने चाहा था ये क़त्ल होते रहें
और इन्सान अपनी गवाही न दे

किसकी आँखों में थी नींव दीवार की
किसके सीने में घर थे बिखरते हुए
किसके हाथों में किस किस की बंदूक थी
किसने देखा है अपनों को मरते हुए

कुछ भी सोचे बिना, कुछ भी समझे बिना
चल पड़े हम भला कौन सी राह पर
नफ़रतों का खुदा तो सलामत ही है
हम जलाने में मसरूफ़ हैं अपने ही घर

जो पराये हैं वो कब किसी के हुए
पर जो अपने हैं उनको ये क्या हो गया
सबकी चाहें मरी सबके सपने टूटे
कोई दुनिया को ऐसी तबाही न दे।

– बृजमोहन

ये वक़्त की आवाज़ है

मिल के चलो मिल के चलो मिल के चलो
चलो भाई मिल के चलो मिल के चलो मिल के चलो
ये वक़्त की आवाज़ है मिल के चलो
ये ज़िंदगी का राज़ है मिल के चलो

आज दिल की रंजिशें मिटा के आओ
आज भेदभाव सब भुला के आओ
आज़ादी से है प्यार, जिन्हें देश से हैं प्यार
कदम से कदम और दिल से दिल मिलाके आओ

जैसे सुर से सुर मिले हों राग के
जैसे शोले मिल के बढ़ें आग के
जिस तरह चिराग से जलें चिराग
ऐसे चलो दूरियां सारी त्याग के

– प्रेम धवन

कोई शम्मा जलाइए

गर हो सके तो कोई शम्मा जलाइए
इस दौर-ए-सियासत का अंधेरा मिटाइए
ज़ुल्म-ओ-सितम की आग लगी है यहां वहां
पानी से नहीं प्यार से इसको बुझाइए

बस बंद कीजिए आकाश में नारे उछालना
ये जंग है इस जंग में ताकत लगाइए

क्यों कर रहे हो आंधियां रुके का इंतज़ार
आइए हमारे कांधों से कांधा मिलाइए

–अज्ञात



इस देश की सूरत

इस देश की सूरत बदलने के लिए उठो
गांव गांव से उठो बस्ती बस्ती से उठो
इस देश की सूरत बदलने के लिए उठो

हाथ में जिसके कलम है कलम ले के उठो
बाजा बजाना जानने वाले बाजा लेके उठो

हाथ में जिसके औजार हैं
औजार ले के उठो
पास में जिसके कुछ भी नहीं
आवाज ले के उठो।

– श्याम तोमर

शांति के सिपाही चले

शांति के सिपाही चले क्रांति के सिपाही चले
लेके खैरख्वामी चले रोकने तबाही चले

बैर भाव तोड़ने, दिल को दिल से जोड़ने
क़ौम को संवारने, जां अपनी वारने
रोकने तबाही चले

सत्य की संभाल ढाल
शांति की ले मशाल
धरती मां के नौनिहाल
रोकने तबाही चले

– दुखामल

किस लिए पढ़ें

इसलिए पढ़ो कि खत्म हो नहीं रहा जहां
इसलिए पढ़ो कि पढ़ के तुम रहो ना बेजुबां
इसलिए पढ़ो कि अंधकार को जला सको
इसलिए पढ़ो कि ज़ुल्म का क़िला ढहा सको

इसलिए पढ़ो कि खुशबुओं को तुम बचा सको
इसलिए पढ़ो कि हरेक फूल को खिला सको
इसलिए पढ़ो अपने गीत गवा सको
इसलिए पढ़ो कि तुम भी अपना सर उठा सको

इसलिए पढ़ो कि भूख के खिलाफ लड़ सको
इसलिए पढ़ो कि ज़ुल्म की किताब पढ़ सको
इसलिए पढ़ो कि अपने पांव आप चल सको
इसलिए पढ़ो कि तुम भी ज़िंदगी बदल सको

– बृजमोहन



❑
नताशा बधवार

नताशा बधवार 'माय डॉटर्स मॉम' और 'इमॉर्टल फ़ॉर ए मूमेंट' की लेखिका हैं. वह फ़िल्म मेकर, टीचर और तीन बेटियों की माँ हैं। ❑ सं.

बच्चों की परवरिश:

ख़ुशी की चाबी और बचपन के जादुई क़िस्से

❑

मैं अपने माता-पिता की इकलौती बेटी हूँ। दो भाइयों के साथ बड़ी हुई हूँ, और बचपन में एक बहन के लिए बहुत तरसती थी। लेकिन बड़े होकर तो जैसे मेरी लॉटरी लग गई, जब मैं तीन बेटियों की माँ बनी। यह मेरे लिए एक जादुई सफ़र जैसा है।

अपने आस-पास के लोगों की तरह ही मुझे भी अपने बच्चों की परवरिश को लेकर शुरू में बहुत सारी ग़लतफ़हमियाँ थीं। फिर जैसे-जैसे साल गुज़रते गए, वह सारा आत्म-विश्वास और ज्ञान, जो कि मुझे लगता था कि मुझे क़ुदरत से एक वरदान की तरह मिला था, वो सब धीरे-धीरे हवा होते गए. अभी मैं पहले से हल्का महसूस करती हूँ और शायद पहले से ज़्यादा समझदार भी हो गई हूँ।

लेकिन इस दौरान जो सबक़ मैंने सीखें, वे किसी पुख़्ता नतीजे तक नहीं पहुँचते, वो आपस में टकराते भी हैं और हमेशा कारगर भी नहीं होते। यह सब बच्चों जैसा ही है, जिनसे ख़ुद मैंने हर चीज़ सीखी हैं निजी अनुभव के ज़रिए।

जब कभी भी मैं किसी उलझन में होती हूँ तो ख़ुद को यही समझाती हूँ कि फ़िलहाल थोड़ी देर के लिए शांत रहें. जैसा कि एक मशहूर गाना भी है- अभी तो पार्टी शुरू हुई है।

मां-बाप होना एक जादुई बात है लेकिन हम सभी को पता है कि ज़िंदगी में सुकून हासिल करना कितना मुश्किल काम है। ज़िंदगी में उथल-पुथल तो आसानी से पैदा हो जाती है। लेकिन सुकून हासिल करने के लिए अक्सर आपको मुश्किल और टेढ़े-मेढ़े रास्तों से गुज़रना होता है।

हर परिवार का रास्ता अलग होता है। किसी ऐसे मुक़ाम तक पहुँचने के लिए, जहां हम आराम कर सकें और चैन की सांस ले सकें, अच्छा-ख़ासा दम-ख़म हमारे पास होना चाहिए।

पैरेंटिंग इस बात की माँग करती है कि हम हर वक़्त अपने बच्चो के सामने हाज़िर रहें। काम के लिए घर से दूर रहना आसान है, रोज़ ट्रैफ़िक में फंसे रहना उससे भी ज़्यादा आसान है। मां-बाप को सोमवार का दिन सबसे ज़्यादा अच्छा लगता है। अगर आप घर से काम करते हैं तो आपको बच्चों को स्कूल भेजना होता है। लेकिन अगर आप घर से बाहर काम करते हैं तो आपको ख़ुद को ही बाहर भेजना होता है। छोटे बच्चों के मां-बाप के लिए सोमवार में शनिवार छुपा होता है।

हक़ीक़त यह है कि हमारे बच्चे एक-दूसरे को वही देंगे, जो वे हमसे पाएंगे। मैंने अपनी ख़ामियों को स्वीकार करना सीख लिया है और जिस काम में मैं माहिर हूँ उसका जश्न मनाना भी सीख लिया है। रोज़-रोज़ संतुलित आहार पकाना मुझे बोर कर देता है, लेकिन मैं बहुत अच्छी तस्वीरें खींचती हूँ. लिहाज़ा मैं ख़ूब फ़ोटो खींचती हूँ।

जब हम लोगों को बाहर जाकर कुछ शानदार खाने का दिल करता है तो हम अपने पड़ौस के बाजार में जाकर डोसा खा लेते हैं। किसी दिन हम लोग मोमोज और चाट पापड़ी की दुकान पर धमक जाते हैं। लेकिन फ़ोटो मैं ख़ुद खींचती हूँ, अपने ही प्यार भरे हाथों से। इससे उतने ही ख़ूबसूरत पलों और यादों का जादुई बक्सा तैयार होता जाता है, जितना स्वादिष्ट खाने की यादों से तैयार हो सकता है।

मैं तारीफ़ और प्यार को स्वीकार करना सीख रही हूँ। मैं अपने बच्चों की बातों पर भरोसा करने लगी हूँ। **मैं ख़ुद को भी अहमियत देने लगी हूँ। मैं अपने आप से कहती हूँ, तुम ख़ास हो, तुम्हारे होने की अहमियत है।**

यही एक तरीक़ा है जिससे मैं अपनी बेटियों को यक़ीन दिला सकती हूँ कि वो कितनी ख़ास हैं। मैं ख़ुद की सुनती हूँ, बच्चों की सुनती हूँ। फ़ोन की घंटी बजती है, बजती रहे, मैं जवाब नहीं देती। हमारी ज़रूरतों में जब कोई टकराव आता है तो हम आपस में बैठकर उसका हल निकालते हैं।

बच्चे भी इस मामले में कोई ज़बर्दस्ती नहीं करते हैं। हमारे बच्चे हमें अपने बचपन की याद दिलाते हैं कि जब हमने यह सफ़र शुरू किया था तब हम कैसे थे।

हम कैसे हो सकते हैं, क्या कुछ हम दोबारा हासिल कर सकते हैं। शिशु, ठुमुक-ठुमुक चलने वाले, स्कूली बच्चे। जैसा कि हमारी मंझली बेटी अलीज़ा ने एक बार धीरे से कहा था, मुझे तो सब कुछ पता है, लेकिन आप कुछ बातें भूल गई हैं, मम्मा। ❑

(यह संपादित आलेख बीबीसी हिन्दी से साभार।)



मैं स्पष्ट रूप में यह जरूर देख और समझ सकता हूं कि यद्यपि मेरे आसपास प्रत्येक वस्तु निरंतर बदलती, निरंतर नष्ट होती रहती है। फिर भी इस परिवर्तन के पीछे ऐसी एक सजीव, चेतन शक्ति है, जो कभी नहीं बदलती, जो सबको एकता के सूत्र में बांधे रखती है, जो सृजन करती है, नाश करती है और पुनः नवसृजन करती है। यह घट घट में बसी हुई चेतन शक्ति या तत्व ही ईश्वर है। ऐसी कोई वस्तु, जिसे मैं केवल इंद्रियों से देखता हूं और अनुभव करता हूं, शाश्वत नहीं हो सकती या नहीं होगी; इसलिए एकमात्र ईश्वर की ही सत्ता शाश्वत है।

और, यह कल्याणकारी है या अकल्याण करने वाली? मैं तो इसे शुद्ध कल्याणकारी शक्ति के रूप में ही देखता हूं, क्योंकि मैं देख सकता हूं कि मृत्यु के बीच जीवन का अस्तित्व बना राहत है, असत्य के बीच सत्य टिका रहता है और अंधकार के बीच प्रकाश जीवित राहत है। इसलिए मैं इस निर्णय पर पहुंचता हूं कि ईश्वर जीवन है, सत्य है, प्रकाश है। वह प्रेम है, वह सर्वोच्च शिव है – शुभ है। ❑

महात्मा गांधी (नवजीवन/ 1959)

प्राथमिक शिक्षा में बाल रंगमंच

❑



❑

राकेश जैन

शिक्षक की भूमिका से सेवा मुक्त बहुविध विषयों पर, खासकर, स्मृति शेष विभूतियों पर लेखन में व्यस्त हैं। अपने लेखन में वे इतिहास के अनछुए पहलुओं को भी पाठकों के समक्ष उजागर करते हैं।❑ सं.

नाटक एक ऐसा माध्यम है जो बच्चों को बहुत अच्छा लगता है और जिसमें वे पूरी तरह से खो जाते हैं। इसका एक कारण यह है कि उन्हें किसी की नकल करने में बहुत मजा आता है। यह नकल उनकी अपनी मन पसंद की कहानी पर हो तो उसे करने और देखने दोनों में ही बहुत अच्छा लगता है। मनोविज्ञान के जानकार कहते हैं कि हम में अनुकरण की वृति सहज ही होती है। यह वृत्ति दूसरी प्रेरणाओं के समान ही एक प्रेरणा है। बचपन में इस प्रेरणा का बल अधिक होता है। बालक जो कुछ भी देखते या सुनते हैं, उन सबका अनुभव करने के लिए वे बहुत उत्सुक रहते हैं। इसलिए अपनी देखी या सुनी चीज को हर तरह से अपने सामने खड़ी करने का प्रयत्न करते रहते हैं। ये प्रयत्न उनके अनुकरणशील स्वभाव के प्रबल प्रमाण प्रस्तुत करते हैं और यहीं से उनके नाट्य-प्रयोगों का आरंभ होता है।

हम देखते हैं कि जो घटनाएं बच्चों के आस-पास दिन-रात घटती रहती हैं, उनका अभिनय वे अपने छोटे-छोटे खेलों के रूप में बराबर करते रहते हैं। यदि हम बालकों के इन छोटे-छोटे खेलों को ध्यान से देखेंगे तो स्पष्ट पता चलेगा कि बच्चों के ये सारे खेल बड़ी उम्र वाले लोगों के क्रिया कलापों की नकल ही होती है। बच्चों के गुड्डा-गुड्डी के खेल, गाड़ी-गाड़ी के खेल, घर और दुकान के खेल अथवा ऐसे ही दूसरे अनेक खेल बड़ों के काम-काजों की छोटी-छोटी प्रतिक्रियाएं होती हैं। बालकों के अनुकरणशील स्वभाव में से उत्पन्न होने वाले ये सब खेल उनके छोटे-छोटे नाट्य-प्रयोग ही होते हैं।

अपने इन प्रयोगों द्वारा बालक प्रत्यक्ष घटने वाली घटनाओं का अनुभव स्वयं करते हैं। वे घटी हुई घटनाओं को अथवा दूर के दृश्यों को अपनी आंखों के सामने खड़ा करके उनका उपयोग करते हैं और इस तरह वे अपनी कल्पना-शक्ति और सृजन-शक्ति का पोषण करके उसको सुदृढ़ और तीव्र बनाते हैं। अपने इन प्रयोगों द्वारा बालक शिक्षक की सहायता और निर्देश के बिना भी अपने शरीर और मन की भिन्न-भिन्न शक्तियों का विकास करते हैं। इनके कारण उनकी अवलोकन-शक्ति में सूक्ष्मता आती है और घटनाओं से भली-भांति प्रभावित होने की और उन घटनाओं को व्यक्त करने की उनकी शक्ति का विकास होता है। यह एक अलग बात है कि बालक अपने इन प्रयत्नों को नाट्य-प्रयोगों के रूप में जानते न हों। इसमें महत्व की बात तो यही है कि बालकों के लिए ये प्रयत्न सहज है और अपने इस प्रयत्नों

द्वारा ही वे हर एक चीज को समझने का सीधा और सच्चा रास्ता खोज लेते हैं। अपने प्रयोगों द्वारा ही बालक काल्पनिक ज्ञान के बदले वास्तविक ज्ञान प्राप्त करते हैं और विद्यालय में पढ़े बिना भी वे अपने को शिक्षित बना लेते हैं।

यदि बालकों की इस वृत्ति को शिक्षा के कार्य में उचित स्थान दिया जाए, तो आजकल जो काल्पनिक ज्ञान बड़ी मात्रा में दिया जाता है और सच्चाई का या वास्तविकता का ज्ञान बहुत ही कम मिलता है, उसके बदले सच्चाई संबंधी उनका ज्ञान बढ़ सकेगा और काल्पनिक बातों का ज्ञान भी उनको एक मर्यादित रूप में मिलता रहेगा। इस तरह विद्यालयों की पढ़ाई पर बालकों की उम्र का जो निरर्थक व्यय लगातार होता रहता है, वह रुक सकेगा।

बच्चे स्वभावत: हाव-भाव वाली कहानियां सुनना पसन्द करते हैं। स्वयं अपनी बात को कहने के लिए विविध प्रकार की क्रियाएं,अंग संचालन आदि करते है। वास्तव में अभिनय एक प्रकार की आनन्ददायक क्रिया है जिसमें शरीर की चेष्टाएं तथा मन के भाव दोनों का शानदार तालमेल होता है।

किसी भी विषयवस्तु को अभिनय के माध्यम से अत्यन्त सरलता से प्रस्तुत किया जा सकता है। इसी प्रयास को उभारने का उपक्रम है शिक्षा में नाट्यकला। बालक अभिनय करेंगे, आनन्दित होंगे तथा शिक्षा में नाट्यकला का प्रयोग कर शिक्षा को आनन्ददायक एवं रोचक बना सकेंगे। विद्यालयी विषय में एक महत्वपूर्ण शिक्षण उपकरण के रूप में नाटक का उपयोग करना आसान भी हो सकता है। यह विद्यालय में शिक्षण के लिए व्यावहारिक, प्रभावी एवं सशक्त दृष्टिकोण प्रदान करता है जो सीखने के माहौल को बदल देता है।

शिक्षक समुदाय द्वारा बच्चों के भीतर छिपे सहज दृढ़ विश्वास एवं जिज्ञासाओं को खोलने की साधारण-सी समझ के साथ प्रयोग में लाई जा सकने वाली वह लोकतांत्रिक प्रक्रिया है जो यह मानती है कि बच्चे स्वभावगत प्रतिभावान होते हैं और अगर उन्हें अवसर एवं विश्वास दिया जाए तो वे विभिन्न मूर्त-अमूर्त, आभासी-विरोधाभासी सिद्धांतों एवं व्यवहारों से भरे इस रंगमंच रूपी संसार में अपनी पसंद की एक ऐसी भूमिका को चुनकर लंबे समय तक खुशी-खुशी निभा सकते हैं, जिसका सरोकार सिर्फ उस भूमिका को निभाने में मिल रही एकाकी खुशी से नहीं, बल्कि अपने सह अभिनेताओं एवं दर्शकों को भी उस खुशी में शामिल करने से है।

नाटक खेलकर पृथ्वी की गति की बात, रात और दिन की बात और ऋतुओं में होने वाले परिवर्तनों की बात समझाई जा सकती है। कोई एक विद्यार्थी (गोल-मटोल) पृथ्वी का रूप धारण करे, वह अपने सिर पर पृथ्वी का गोला रख ले और किसी सूर्य-रूप विद्यार्थी के चारों ओर घूमना शुरू कर दे। सूर्य-रूप विद्यार्थी के पास जो प्रकाश हो, उससे दिन बने और दूसरी तरफ अंधेरा दिखाई दे। पृथ्वी के घूमने के मार्ग को निश्चित करने के बाद अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग ऋतुओं की जगहें दिखाई जा सकती हैं और इस बात का अनुभव भी कराया जा सकता है कि पृथ्वी पर उसका कहां, कैसा, प्रभाव पड़ता रहता है। कक्षा के अंदर ही पहाड़, नदियां, नाले, समुद्र और धरती आदि के नमूने बनाए जा सकते हैं। बाद में कागज की बनी रेलगाड़ी में या नाव में बैठा कर विद्यार्थियों को कक्षा की फर्श पर बनाए गए अलग-अलग देशों की यात्रा करवाई जा सकती है। विद्यार्थी नाट्यकला से भूगोल पढ़ें तो भूगोल विषय जो आज उनको एकदम नीरस और रटने-घोटने का विषय लगता है, वह वैसा न रहकर उनके लिए बहुत आकर्षक और आनन्ददायक बन सकता है।

नाट्य-प्रयोग-पद्धति एक ऐसा सुंदर साधन है कि जिसकी मदद से इतिहास की दृष्टि देने का काम, विद्यार्थी के मन में विषय के प्रति रुचि जगाने का काम और तथ्यों को सरलता से याद रखने का काम किया जा सकता है। माध्यमिक विद्यालयों में पढ़ाए जाने वाले इतिहास को एक महान् नाटक के अंक में और प्रवेश में बांटकर यदि पूरे इतिहास को अर्थ से इति तक नाटक के रूप में खेला जा सके, तो कहा जाएगा कि सच्चे अर्थ में इतिहास पढ़ाया गया है। नाट्य शिक्षा की गतिविधियों के आधार पर कक्षा में नियमित गतिविधियां तय की जा सकती है जिससे बालक के सर्वांगीण विकास में मदद मिल सकती हैं।❑

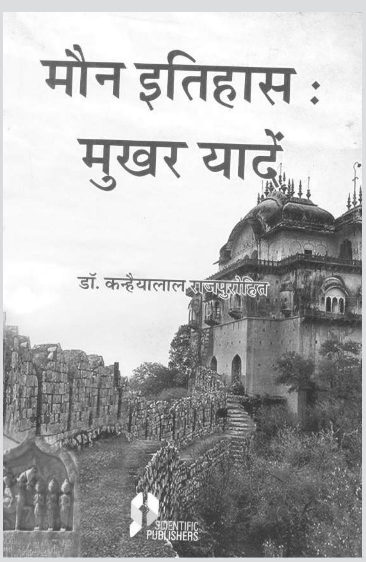
50/424, प्रताप नगर, सांगानेर,जयपुर
मो.-9829009806

मौन इतिहास : मुखर यादें

लोक धारणाओं वाले इतिहास का सम्मोहन

❑
राजेन्द्र बोड़ा

इतिहास लेखन में विगत में हुई घटनाओं का सिलसिलेवार प्रस्तुतीकरण होता है। एक तो ब्योरों का समकालीन लेखकों द्वारा वर्णन होता है या इतिहास के पात्रों का अपना लेखन होता है और दूसरे बाद में विभिन्न स्रोतों से जानकारियों का एकत्रीकरण करके उसका लेखा-जोखा होता है। जानकारी के ये स्रोत पुरातात्विक, साहित्य और लोक स्मृतियों जैसे अनेक हो सकते हैं। इतिहास लेखन वैज्ञानिक विधा मानी गई है जिसमें सत्य का अन्वेषण होता है। क्योंकि इतिहासकार अतीत के अज्ञात को खोजता है और उसे ज्ञात करता है इसलिए उससे अपेक्षा की जाती है कि वह पूर्वाग्रहों से मुक्त हो। परंतु इतिहास को पढ़ने वाले सामान्य जन ऐसे नहीं होते। वे अपने इतिहास में वे तत्व खोजते हैं जिन पर वे गर्व कर सकें। वे इतिहास की घटनाओं को अपने नजरिए से देखते हैं ताकि वे अपने को अतीत की गरिमा का वंशज होने का अभिमान कर सकें।



बीते ज़माने की कहानियां लिखित इतिहास में ही दर्ज नहीं होती, वे जनश्रुति में भी दर्ज होती है। उनमें तथ्यों के साथ कल्पनाओं की उड़ान भी होती है। ऐसी कहानियां दंतकथाएं बन जाती हैं जिनकी लोक मानस में विश्वसनीयता लिखित इतिहास से अधिक हो जाती हैं। उन कहानियों को जो लिखित इतिहास में दर्ज नहीं हैं उन्हें डॉ. कन्हैयालाल राजपुरोहित जैसे गहन अध्येता अपनी पुस्तक मौन इतिहास : मुखर यादें में संजो कर लाये हैं। इसमें जन समुदायों में प्रचलित दोहों और लोकोक्तियों का संकलन है।

राजपुरोहित, जिन्हें वाग्देवी की साधना विरासत में मिली है, ने इस पुस्तक में जनश्रुतियों तथा दोहों व कवित्त में मिलने वाली अतीत की घटनाओं का उनके संदर्भों के साथ संकलन करके तत्कालीन जीवन का ताना-बाना प्रस्तुत किया है। इसके परिचय में कहा गया है कि संकलित की गई घटनाओं में वर्तमान का सही विश्लेषण करने की सामर्थ्य होती है। यह भी कहा गया है कि वर्तमान की सटीक व्याख्या के लिये जरूरी है अपनी धरोहर को समझना जिसका नाम है इतिहास।

राजपुरोहित 'अपनी बात' में कहते हैं कि अतीत के अज्ञात को खोजना तभी सार्थक होगा जब वह पूर्वाग्रह से मुक्त हो। मगर क्या ऐसा

संभव है? खासकर लोक स्मृतियों में जो रहता है वह इतिहास लेखन के लिये स्रोत तो हो सकता है परंतु विगत अपने आप में पूरा सच भी नहीं होता। वे स्वयं कहते हैं कि लिखित इतिहास के नाम पर हमें प्रायः वही पढ़ने को मिलता है जो राज्याश्रित कलमकारों ने अपने आश्रयदाता का यशोगान करते हुए लिखा। किन्तु दूसरी ओर यह भी सच है कि जो लोक स्मृति में सुरक्षित रहता है वह भी तत्कालीन समाज की धारणाओं के आधार पर होता है जिनमें पूर्वाग्रह युक्त अनेक काल्पनिक किंवदंतियां भी होती हैं।

लेखक का यह कहना कि पारंपरिक इतिहास लेखन में जन सदैव उपेक्षित रहा है उचित है। उनकी इस बात से भी किसी को असहमति नहीं हो सकती कि इतिहास शासकों की कहानी मात्र नहीं होता। सिर्फ शासक ही इतिहास नहीं रचते। शासित भी इतिहास का अभिन्न अंग होते हैं। इतिहासकार जानते हैं कि सभी स्रोतों, यहां तक कि एक विशेष ऐतिहासिक समय अवधि के मूल स्रोतों में भी कुछ न कुछ होता है जो पूर्वाग्रह वाला होता है, उनमें चूक होती है, या अंतर्विरोध होता है। उनकी अन्य सीमाएं भी होती है। इसका मतलब यह नहीं है कि ऐसे स्रोत पूरी तरह से अमान्य और बेकार होते हैं; बल्कि इसका मतलब होता है कि इतिहासकारों को उन्हें विभिन्न स्रोतों की ताकत और कमजोरियां पहचानने के लिए बहुत कुछ जानना और अध्ययन करना होता है।

इतिहास का दर्शन और पद्धति समय के साथ बदलती रही है और आगे भी बदलती रहेगी। और यह भी सच है कि कोई भी इतिहासकार शत-प्रतिशत वस्तुनिष्ठ नहीं हो सकता। लेकिन इतिहासकार अपनी सीमाओं और रुझानों को पहचानने की कोशिश करते हैं। इतिहासकार वर्तमान के मूल्यों, विश्वासों, व्यवहारों और दृष्टिकोणों को उन विषयों पर रखने का प्रयास नहीं करते जिनका वे अध्ययन करते हैं। इतिहासकार अपने विषयों को इस संदर्भ में समझने की कोशिश करते हैं कि कैसे और क्यों उस युग के लोगों ने वैसा सोचा और व्यवहार किया, न कि आज लोग कैसे सोचते और कार्य करते हैं। वे आज के चश्मे से विगत को नहीं देखते हैं। इस दृष्टि से राजपुरोहित का यह संकलन इतिहास का स्रोत हो सकता है इतिहास नहीं।

इतिहास एक बौद्धिक अनुशासन होता है जिसे इतिहासकार निभाते हैं और उसी अनुशासन में रहते हुए अतीत को समझने की कोशिश करते हैं। क्योंकि इतिहास परिवर्तन के बारे में होता है इसलिए उसमें कभी एक निश्चित तरीके से हमेशा जैसा कुछ नहीं होता। मगर गैर-इतिहासकार मुख्य रूप से टेलीविजन, फिल्मों और इंटरनेट के साथ-साथ अखबारों तथा किताबों में छपी चीजों से जानकारी प्राप्त करते हैं। अगर स्रोत दिलचस्प हो और उनकी अपनी धारणाओं को पुष्ट करने वाला हो तो वे आम तौर पर किसी भी स्रोत को बिना उसकी समीक्षा किये स्वीकार कर लेते हैं।

गैर-इतिहासकार अक्सर कहते हैं कि इतिहास खुद को दोहराता है या चीजें हमेशा से ऐसी ही थीं। लेकिन इतिहास अपने आप को दोहरा नहीं सकता क्योंकि इतिहास कोई जीवित, विचारशील वस्तु नहीं है। जब वे विश्वास करते हैं कि चीजें आम तौर पर वर्तमान की तुलना में पहले बेहतर थीं तब गैर-इतिहासकार अक्सर अतीत को रोमांटिक करते हैं और अच्छे पुराने दिनों की बात करते हैं। राजपुरोहित का यह कमाल का संकलन अतीत की रूमानी छवि पेश करता है। उसमें इक प्रकार का सम्मोहन है। यह उनकी पुस्तक की सफलता है।

भारत में क्रमबद्ध इतिहास लेखन की परंपरा नई है। भारतीय दर्शन में समय सीधी रेखा में आगे नहीं बढ़ता। वह चक्र में घटता है। वह फिर-फिर होता है। इसीलिए बार-बार अवतार होते हैं। पश्चिम में जो बीत गया सो बीत गया। आवागमन का विश्वास वहां नहीं है। इसलिए उन्होंने अपना इतिहास दर्ज करके रखने की परंपरा डाली। भारत में ऐसा नहीं हुआ। किन्तु विगत की स्मृतियां तो पीढ़ी दर पीढ़ी बनती और विस्मृतहोती रही। इस पुस्तक में १८ वीं सदी के बाद के काल की रियासतों व रजवाड़ों में हुई उथल-पुथल की जन स्मृतियां है जो बीसवीं सदी के मध्य आज़ादी के बाद रियासतों के भारत संघ में विलीनीकरण के बाद बने राजस्थान के शुरुआती दौर तक चली आई हैं।
बीसवीं सदी के मध्य जब अंग्रेज हुकूमत गई और आजादी के बाद लोकतंत्र की हवा बही तब रियासतों के एकीकरण और उनका भारत संघ में विलय के लिए वल्लभ भाई पटेल का यशोगान भी जो

कवि नाथूसिंह मेहारिया ने अपने अंदाज़ में किया वह भी इस पुस्तक में दर्ज हुआ है। धरती करै जुहारडा ठाकुर हुया ठकरैल/ हंसता हंसता खोंस ली एकण हाथ पटेल।

खोखली हो चुकी प्रजापीड़क सामंती व्यवस्था देश की आज़ादी के साथ जब समाप्त हो रही थी और डींग मारने वाले सामंत कह रहे थे हमने जागीरें रक्त बहा कर प्राप्त की हैं तो रक्त बहा कर ही अपना अधिकार छोड़ेंगे तब जनमानस बोल रहा था रही घणा दिन राज रै रावलै बिन आदर बरतीह/ जाती करै जुहारड़ा धणियां सूं धरतीह। (भूमि बहुत दिन रावले के राज में रही और आदर न पा सही इसलिए वह धरती उनसे नमस्कार करते हुए चलती बन रही है।) मुख्यमंत्री मोहनलाल सुखाड़िया से मतभेद के बाद उनके साथी कुंभाराम आर्य ने मंत्रीमंडल से त्यागपत्र दे दिया जिसके अंत में उन्होंने एक जनप्रचलित दूहा लिख दिया तूं पाड़ोसण बावली नित उठ करती राड़/''आधौ बगड़ बुहारती (अब) सारौ ई बुहार।'' अर्थात बुद्धिहीन पड़ोसिन तू रोज उठते ही झगड़ा टंटा करती है। पहले आधा घर बुहारती थी ले अब सारा ही तेरे हवाले, उसे बुहारती रह।

राजपुरोहित के इस संकलन में मारवाड़, मेवाड़, बीकानेर, जैसलमेर, शेखावाटी, जयपुर, अजमेर, सिरोही, हाड़ौती और बांसवाड़ा सभी अंचल शामिल है जो उनकी मेहनत को दर्शाता है। इनके अलावा एक खंड विविध भी है जो इस संकलन को पूर्णता देता है। किन्तु पुस्तक में अनुक्रमणिका का अभाव खलता है। पाठक को किसी विशेष अंचल तक जाना हो तो उसे पूरी पुस्तक टटोलनी पड़ती है।

'मौन इतिहास: मुखर यादें' वे आख्यानहैं, जिन्हें लेखक झांकियां कहता है, जो पुरातन राजस्थानी जीवन के आधारभूत मूल्यों के साथ ही उसकी त्रासदी का भी लेखा–नेखा प्रस्तुत करती हैं। ये मुखर यादें राजस्थान के सामंती विगत की यशोज्ज्वल विरासत ही नहीं उसका कृष्ण पक्ष भी उघाड़ती हैंऔर अपने समय की सच्चाईयों को उजागर करती हैं। ❑

'विराम', 60/17,
रजत पथ, मानसरोवर, जयपुर

मेरे लेखों का मेहनत से अध्ययन करने वालों और उनमें दिलचस्पी लेने वालों से मैं यह कहना चाहता हूं कि मुझे हमेशा एक ही रूप में दिखाई देने की कोई परवाह नहीं है। सत्य की खोज में मैंने बहुत से विचारों को छोड़ा है और अनेक नई बातें मैंने सीखी भी है। उमर में भले ही बूढ़ा हो गया हूं, लेकिन मुझे ऐसा नहीं लगता कि मेरा आंतरिक विकास होना बंद हो गया है या देह छूटने के बाद मेरा विकास बंद हो जाएगा। मुझे एक ही बात की चिंता है, और वह है प्रतिक्षण सत्य–नारायण की वाणी का अनुसरण करने की मेरी तत्परता। इसलिए जब किसी पाठक को मेरे दो लेखों में विरोध जैसा लगे, तब अगर उसे मेरी समझदारी में विश्वास हो तो वह एक ही विषय पर लिखे हुए दो लेखों में से मेरे बाद के लेख को प्रमाणभूत माने।❑

(हरिजनबन्धु/ 30 अप्रेल, 1933)

अनौपचारिका मंगवाने के लिए जरूरी जानकारी

ऑन लाईन सहयोग राशि के लिए बैंक का विवरण

सद्भावना सहयोग :
व्यक्तिगत 500/– रुपये वार्षिक
संस्थागत 1000/– रुपये वार्षिक
मैत्री समुदाय 5000/– रुपये

BANK OF BARODA
Rajasthan Adult Education Association
Branch Name : IDS Ext.Jhalana Jaipur
I.F.S.C.Code : BARB0EXTNEH
(fifth Character is zero)
Micr Code : 302012030
Acct,No. 98150100002077

उच्च शिक्षा में आगे बढ़ रही हैं लड़कियां

❑

ताजा सरकारी आंकड़े दिखा रहे हैं कि उच्च शिक्षा के जिन क्षेत्रों में लड़कियों लड़कों से पीछे थीं, अब वो उनमें आगे आ रही हैं। भारत में 2019-20 में उच्च शिक्षा में कुल 3.85 करोड़ छात्रों ने दाखिला लिया। इसके पिछले साल 2018-19 के मुकाबले इस संख्या में 11.36 लाख (3.04 प्रतिशत) की बढ़ोतरी हुई है। 2014-15 में यह संख्या 3.42 करोड़ थी।

आँकड़े बताते हैं कि 2015-16 से 2019-20 के बीच उच्च शिक्षा हासिल करने वाली लड़कियों की संख्या (सकल नामांकन दर) 18.2 प्रतिशत बढ़ी है। यह सामान्य नामांकन दर में आई 11.4 प्रतिशत की वृद्धि से ज्यादा है।

इस उछाल की वजह से देश में उच्च शिक्षा में लड़कियों की नामांकन दर अब 27.3 प्रतिशत पर पहुंच गई है, जबकि लड़कों की नामांकन दर 26.9 प्रतिशत पर ही है।

कॉमर्स एक नया क्षेत्र बन कर उभरा है जिसमें लड़कियों का नामांकन बढ़ रहा है। 2019-20 में पूरे देश में कुल मिला कर 41.6 लाख छात्रों ने बी.कॉम के कोर्स में दाखिला लिया। इनमें 21.3 लाख लड़के थे तो 20.3 लाख लड़कियां।



पांच साल पहले तक बी.कॉम में हर 100 लड़कों पर 90 लडकियां हुआ करती थीं, लेकिन अब यह अनुपात बराबर हो गया है।

डॉक्टरी की पढ़ाई यानी एमबीबीएस और विज्ञान के स्नातक कोर्स यानी बी.एससी में 2017-18 में यही हुआ था। बल्कि तब से डॉक्टरी और विज्ञान के स्नातक कार्यक्रमों में लड़कियों ने लड़कों को पीछे छोड़ दिया है। 2017-18 में विज्ञान की पढ़ाई में हर 100 लड़कों पर 100 लड़कियां थीं और डॉक्टरी की पढ़ाई में हर 100 लड़कों पर 101 लड़कियां थीं. अब हर 100 लड़कों पर विज्ञान में 113 लड़कियां हैं और डॉक्टरी में 110।

इंजीनियरिंग और कानून की पढ़ाई में लड़कियां अभी भी पीछे हैं। बी. टेक के कार्यक्रमों में हर 100 लड़कों पर सिर्फ 42 लड़कियां हैं, और कानून की पढ़ाई में हर 100 लड़कों पर सिर्फ 53 लड़कियां। लेकिन आंकड़े दिखा रहे हैं कि इंजीनियरिंग की पढ़ाई की लोकप्रियता ही गिर रही है। एक तरफ जहां सभी मुख्य उच्च शिक्षा के कार्यक्रमों में नामांकन बढ़ा है, इंजीनियरिंग एकमात्र ऐसा क्षेत्र है जिसमें छात्रों की संख्या गिरी है।

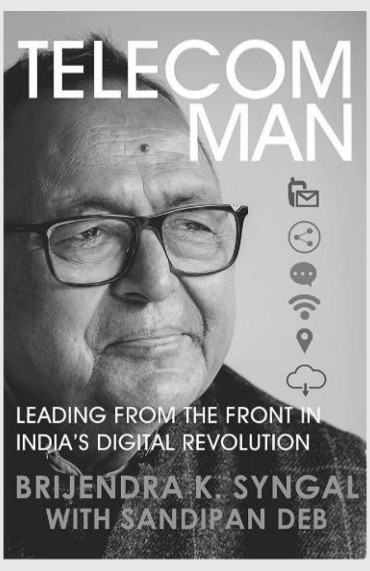
स्नातक स्तर पर इंजीनियरिंग की पढ़ाई में 2018-19 में 38.5 लाख छात्रों के मुकाबले 2019-20 में 37.2 लाख छात्रों ने दाखिला लिया. स्नातकोत्तर स्तर पर भी नामांकन में गिरावट आई है। ❑

भारत में इंटरनेट लाने वाले बी.के.सिंघल नहीं रहे

❑



❑
बी.के.सिंघल



भारत में इंटरनेट के जनक माने जाने वाले बृजेन्द्र के. सिंघल नहीं रहे। विदेश संचार निगम लिमिटेड के अध्यक्ष रहे सिंघल का 82 वर्ष की उम्र में नौ जुलाई को निधन हो गया।

द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ने के एक साल बाद अंबाला में एक सिविल सेवक पिता और गृहिणी मां के घर जन्मे सिंघल ने 1945 में लाहौर के डीएवी मॉडल स्कूल में अपनी स्कूली शिक्षा शुरू की। 1947 में विभाजन के बाद वे अपने परिवार के साथ दिल्ली आ गए।उन्होंने 1957 में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान-खड़गपुर में प्रवेश लिया, जहाँ उन्होंने इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग की पढ़ाई की।

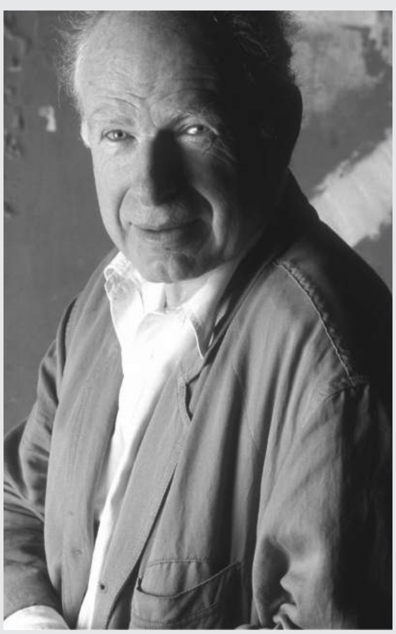
अपने कामकाजी जीवन के दौरान वे इलेक्ट्रॉनिक्स इंजीनियर के रूप में माइक्रोवेव टावर स्थापित करने और को एक्सेल केबलें बिछाने के लिए जंगलों, पहाड़ियों और रेगिस्तानों में तंबूओं में भी रहे। फिर लंदन और बुडापेस्ट में बहुराष्ट्रीय कंपनियों में काम करने के बाद, उन्होंने लंदन में इनमारसैट की नौकरी छोड़ कर अपने परिवार और दोस्तों को आश्चर्यचकित करते हुए 1991 में वीएसएनएल का नेतृत्व करने के लिए मुंबई आ गये जो तब एक पुरानी शैली की, सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनी थी।

वे अपने मजबूत विचारों और निडरता के लिए जाने जाते थे। वीएसएनएल के अध्यक्ष के रूप मेंनौकरशाही की बाधाओं को रोंदते हुए आगे बढ़ने की उनकी क्षमता के लिए उन्हें अनौपचारिक रूप से 'बुलडोजर' के रूप में जाना जाता था, जिसके परिणामस्वरूप सार्वजनिक क्षेत्र की वीएसएनएल 1991 में 125 मिलियन डॉलर की कंपनी से बढ़कर 1998 तक 1.65 बिलियन डॉलर की संचार कंपनी बन गई।वे एक जबरदस्त प्रतिस्पर्धी पेशेवर थे। उन्होंने एक बार कहा था। मुझे प्रतियोगिता पसंद थी लेकिन मुझे प्रतियोगिता का कचूमर निकाल देना और भी अधिक पसंद था।

इंटरनेट मिलने के सत्ताईस साल बाद, आज भारत दुनिया की दूसरी सबसे तेजी से डिजिटलीकरण करने वाली अर्थव्यवस्था है जहां 800 मिलियन से अधिक मोबाइल ब्रॉडबैंड ग्राहक हैं। भारत अब 130 अरब डॉलर से अधिक की सेवाओं के निर्यात के साथ दुनिया का एक सॉफ्टवेयर पावरहाउस भी बन कर उभरा है। ❑

पीटर ब्रूक जिन्होंने थियेटर को तीर्थयात्रा बना दिया

❑



जीवन भर सवाल उठाने वाले 20वीं सदी के सबसे मौलिक और प्रभावशाली थिएटर निर्देशकों में से एक पीटर ब्रूक का 97 वर्ष की आयु गत 2 जुलाई को में निधन हो गया।

वे खुद को कलाकार या विचारक नहीं मानते थे; लेकिन वे निश्चित रूप से एक शिक्षक थे और कई लोगों के लिए एक आदर्शभी। उन्होंने अपने शेक्सपियर, ओपेरा, एशियाई महाकाव्य, जैसेहर तरह के नाटकों में आत्मा की आंतरिक दुनिया और यथार्थ की प्रकृति को मंच की भाषा का बनाने का जतन किया।

थिएटर को उन्होंने मानवता को मरहम लगाने वाला और व्यक्तिगत ईमानदारी की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। ऐसे समय में जब थिएटर को आमतौर पर सभी मोर्चों पर पीछे हटते देखा गयातब इस माध्यम को तीर्थयात्रा बना देना ब्रूक के जीवन की कहानी है। वे योगी और शो मैन दोनों थे। उनमें आध्यात्मिकता, सांसारिकता और शरारत का मोहक मिश्रण था। ब्रूक के लिए 'दुनिया एक रंगमंच' महज जुमला नहीं था, बल्कि वे स्कूल, अस्पताल, फैक्ट्री, खदान या जिम जैसी किसी भी जगह को रंगमंच बना देते थे।

ब्रूक ने व्यावसायिकता के सामने नहीं झुकने की जिद हमेशा बनाए रखी। वे आखिरी दिनों तक भी काम करते रहे। 2017 में प्रकाशित 'टिप ऑफ द टंग' किताब में ब्रूक लिखते हैं, थियेटर की हर शैली, डॉक्टर के पास जाने जैसी होती है। भारतीय महाकाव्य 'महाभारत' को पीटर ब्रूक ने अंग्रेजी और फ्रेंच नाटक के रूप में यूरोप और अमेरिका सहित कई पश्चिमी देशों में पहुंचाया। वियतनाम के युद्ध काल में ब्रूक ने पेरिस में जब महाभारत को रंगमंच पर पेश कियातो दर्शक एकटक करीब नौ घंटे लंबा नाटक देखते रहे। आखिर में ब्रूक ने पूछा कि क्या युद्ध संघर्ष खत्म कर सकता है? क्या वाकई नेताओं और लोगों के पास शांति और युद्ध के बीच किसी एक को चुनने का विकल्प होता है? ब्रूक कहते थे, हर दिन दुनियाभर में मूर्खतापूर्ण युद्धों से हो रही पीड़ा और दहशत के बारे में सुनते हैं। महाभारत करोड़ों लाशों की बात है और सबसे अहम बात यह है कि युधिष्ठिर अंत में कहते हैं कि 'यह जीत एक हार है।' यही युद्ध का असल सच है।

भारत के अंतरिक्ष वैज्ञानिक विक्रम साराभाई की बेटी मल्लिका साराभाई ने पीटर ब्रूक के नाटक महाभारत में द्रोपदी की भूमिका निभाई थी। इस नाटक पर बाद में उन्होंने फिल्म भी बनी थी। उन्हें साल भारत सरकार ने यहां के नागरिक सम्मान 'पद्म श्री' से सम्मानित किया। ❑

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या

एक, आधिकारिक बयान के अनुसार, भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एनसीएफ) को संशोधित करने के लिए चल रहे काम से संबंधित परामर्श के दायरे का विस्तार करने के लिए एक ऑनलाइन सार्वजनिक सर्वेक्षण शुरू किया है, जिसके आधार पर नई स्कूल पाठ्यपुस्तकें तैयार की जाएंगी। पिछले दिनों मंत्रालय ने घोषणा की कि कोई भी व्यक्ति जो एनसीएफ के संशोधन पर अपना इनपुट देना चाहता है, वह पोर्टल ncfsurvey. ncert. gov. in के माध्यम से ऐसा कर सकता है।

एनसीएफ एक व्यापक ढांचा है जिसमें स्कूली पाठ्यक्रम में क्या शामिल होना चाहिए, इस पर दिशा–निर्देश दिए जाते हैं।

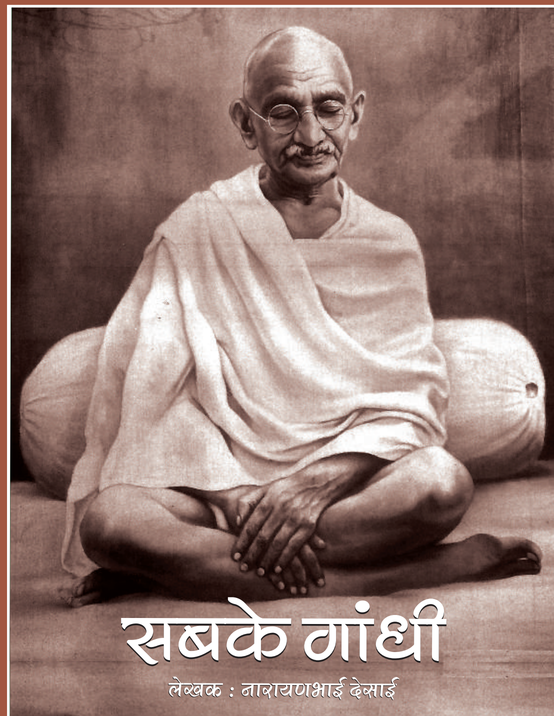
आजादी के बाद से, एनसीएफ में चार बार संशोधन हुए हैं, जिनमें से दो पांच साल की अवधि के भीतर, 2000 और 2005 में हुए।

इसमें वर्तमान संशोधन एक 12 सदस्यीय संचालन समिति कर रही है जिसके अध्यक्ष हैं इसरो के पूर्व अध्यक्ष के. कस्तूरीरंगन। समिति द्वारा रिपोर्ट देने के लिए दिसंबर 2022 की समय सीमा निर्धारित की गई है। यह ऑनलाइन सर्वेक्षण 23 भाषाओं में किया जा रहा है, जिसमें संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल भाषाएं भी शामिल हैं।

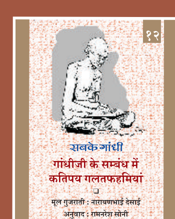
सर्वेक्षण में प्रतिभागियों से पाठ्यपुस्तकों में पाठ्यचर्या सामग्री के संबंध में प्राथमिक मुद्दों को संबोधित करने का कहा गया है।

जैसे कक्षाओं में पढ़ाई को और अधिक मनोरंजक बनाने के बेहतर तरीके शामिल है। ऐसे दस सवालों पर प्रतिक्रिया चाही गई है।

सर्वेक्षण के हिस्से के रूप में, प्रतिभागी स्कूली शिक्षा को अधिक प्रासंगिक, प्रभावी और शिक्षार्थियों के लिए सार्थक बनाने के तरीकों पर एक छोटा सा लेख भी प्रस्तुत कर सकते हैं। ❑









सहयोग राशि के लिए
बैंक विवरण

BANK OF BARODA
Rajasthan Adult Education Association
Branch Name : IDS Ext. Jhalana Jaipur
I.F.S.C. Code : BARB0EXTNEH
(Fifth Character is zero)
Micr Code : 302012030
Acct.No. : 98150100002077

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति
7–ए, झालाना संस्थान क्षेत्र,
जयपुर–302004

सबके गांधी

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति
7–ए, झालाना संस्थान क्षेत्र,
जयपुर–302004

12 पुस्तकों के एक सैट की सहयोग राशि रुपये 500/– मात्र डाक खर्च अलग से देय होगा।

स्वत्त्वाधिकारी राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति द्वारा कुमार एंड कम्पनी, जयपुर में मुद्रित तथा 7-ए, झालाना संस्थान क्षेत्र, जयपुर-302004 से प्रकाशित। संपादक-श्री राजेन्द्र बोड़ा

अनौपचारिका: पृष्ठ-28, अगस्त, 2022, रजिस्ट्रार ऑव न्यूज पेपर, नयी दिल्ली के द्वारा पंजीकृत मासिक पत्रिका RNI 43602/77 ISSN No.2581-981X

सत्यमेव जयते
राजस्थान सरकार

देश में सबसे बड़ी शहरी रोजगार गारंटी योजना



"कोरोना के कारण अर्थव्यवस्था के साथ ही आमजन की आजीविका पर भी संकट आ गया। इस दौरान ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों को रोजी–रोटी के संकट से उबारने के लिए यूपीए सरकार द्वारा प्रारंभ की गई महात्मा गांधी नरेगा योजना ने सम्बल प्रदान किया, जबकि शहरी क्षेत्रों में इस प्रकार की योजना नहीं है।

अत: राज्य के शहरी क्षेत्रों के परिवारों, विशेष रूप से आर्थिक रूप से कमजोर, असहाय एवं बेरोजगार परिवारों को आर्थिक सम्बल प्रदान करने के लिए मनरेगा की तर्ज पर बजट घोषणा के अनुरूप शहरों में भी अब रोजगार सुनिश्चित करने के लिए इंदिरा गांधी शहरी रोजगार गारंटी योजना लागू की जा रही है।

इस योजना से शहरी क्षेत्र में निवास करने वाले परिवारों को भी जीवनयापन करने में मदद मिलेगी।"

अशोक गहलोत, मुख्यमंत्री, राजस्थान

राजस्थान में अब

इंदिरा गांधी शहरी रोजगार गारंटी योजना
(IRGY-Urban)

राजस्थान सरकार शहरों के जरूरतमंद परिवारों को देगी

100 दिन का रोजगार

योजना के लिए सालाना

₹800 करोड़ का प्रावधान

अधिक जानकारी के लिए स्थानीय निकाय कार्यालय
या टोल फ्री नं. 18001806127 / 181 पर सम्पर्क करें अथवा
www.lsg.urban.rajasthan.gov.in देखें

सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, राजस्थान

राजस्थान संवाद